भारतीय राजनीतिक चिन्तन में स्वामी दयानन्द सरस्वती के राजनीतिक चिन्तन की अवधारणा

सद्दाम हुसैन

स्वामी दयानन्द ने अपने प्रसिद्ध ग्रन्थ 'सत्यार्थ प्रकाश' में एक पूरा समुल्लास राज्य व शासन विषय में लिखा है। इसमें उन्होंने राजनीति की उसी परिपाटी का अनुसरण किया है जिसका प्रतिपादन मनुस्मृति तथा अन्य प्राचीन राजनीति विषयक ग्रन्थों में किया गया है। उन्होंने राजा शब्द की व्याख्या 'निर्वाचित सभापति' के रूप में की है। वेदों के एक मत्रं की व्याख्या करते हुए स्वामी दयानन्द ने अपने विचार इस प्रकार प्रकट किए है ''इसका अभिप्राय यह है कि एक को स्वतंत्र राज्य का अधिकार नहीं देना चाहिए किन्तु राजा को सभापति, तद्धीन सभा, राजा और सभा प्रजा के अधीन और प्रजा–राजसभा के अधीन रहे। उनके राजनीतिक विचार उनके द्वारा किए हुए वेदभाष्य तथा ऋग्वेदादिभाष्य भूमिका जैसे ग्रन्थों में मिलते है। स्वामी दयानन्द एक तंत्र शासन के विरूद्ध थे। उन्हें ऐसा शासन ही स्वीकार्य था, जिसमें सब कार्य सभा द्वारा विचार विमर्श के अनन्तर ही किए जाए। एक ऐसे समय में जब जन साधारण की देश के शासन कार्य में साझदेारी नहीं थी, स्वामी दयानन्द ने सत्यार्थ प्रकाश के छठे समुल्लास में लिखा है कि ''राजाओं' के राज में किसान आदि परिश्रम करने वाले है और राजा उनका रक्षक है, जो प्रजा न हो तो राजा किसका?'' आगे वे कहते हैं कि जो प्रजाजन राजा को अन्याय करने व अनीति के मार्ग पर चलने से रोकते हैं वे सब सुख प्राप्त करते हैं। वर्तमान परिस्थिति में दयानन्द के राजनीतिक विचार विशेष प्रासंगिकता रखते है। आज के राजनेता व शासक उनके विचारों से देश के प्रशासन को सुचारू ढ़ंग से चलाने की प्रेरणा ले सकते है तथा राज्य के वास्तविक उद्देश्य को प्राप्त कर सकते है और सच्चे अर्थों में जनकल्याण को बढ़ावा दे सकते हैं।